कारनकौं पायकै। केलमैं कपूर होत नीवमैं कटुक जान, ईख मांहि मिष्टरस देखौ चित लायकै ॥ तैसे शुभ पात्रन को दियौ जो अहार दान, देत सुख अतुल सु कहै कौन गायकै। वोही जो कुपात्रन को दियो कटुफल होत, तातै जैन पात्रन को दीजे हरषायकै ॥ ४ ॥

दोहा।

एक सुपात्रविषें दियौ, दान महाफल देय।
और हजारन के दियैं, कारज नाहिं सरेय ॥ ५ ॥
जैसे सुरतरु एक ही, मनवांछित दातोर।
और हजारों वृच्छतै, कारज कौन निहार ॥ ६ ॥

चौपई (१५ मात्रा)।

सोइ पात्र हैं तीन प्रकार। उतकृष्टे श्रीमुनिवर सार।
मध्यम श्रावक सम्यकवंत। अव्रतसम्यकदृष्टी अंत॥ ७॥
ये ही जोग जान बड़भाग। औरनको तजिये अनुराग।
इनके विषें दियौ जो दान। निश्चयकरि सुख देय महान॥८॥
अहो तासकी महिमा सोय। हमसेती किम बरनन होय।
पात्रदानफलतैं यह जीव। निरमल सुखसौं रहै सदीव॥९॥
शर्म नाम किसको है मीत। कीर्ति कांति अरु रूप पुनीत।
निरमल तन अद्भुत सौभाग। पुन्यवान जिनमतमें राग॥१०
सुव्रतकवरको बीज निहार। ऊंचे कुल में ले अवतार।
सुवरन औ धनधान्य उपान। पुत्र पौत्र तिय भोगमहान॥

दोहा।

इन्द्र चन्द्रनागेन्द्र पद, देवै ये ही दान।
तातै नित ही सुजन जन, दीजै वित्तसमान ॥ १२ ॥

पद्धड़ी।

जे भक्तिसहित देवै सुदान। ते सज्जन जन सँगतलहान। दिन दिन कल्याण नवीन देत। क्रम कर वह शिवपुरराज लेत। श्रीआदिनाथवत भव्य जान। दियौ वज्रजंघ के भव सुदान। तातै नितप्रति चउविध अनूप। धरौ त्यागविषै वुधि हर्षरूप ॥ १४ ॥ जिन भव्यन देकर दान सार। फल पायौ इस अवनी मंझार। तिन नाम कहनको को महान। श्रीजिनवर चंद्र विना न जान। अरु पूरव आचारज सुरीत। तिन नाम कथित आये पुनीत। अब अवसर पाय कहूँ सुनाय। निज बुद्धि युक्त सुन चित्त लाय। श्रीसेन ओर महासेन जान। वर वृषभ सेन शोभायमान। वाराह लखौ श्री कौंडरेस। ये भये प्रकट दाता विशेस ॥ १७ ॥

छप्पय।

सिरीसेन आहार दान पात्रनकौं दीनौं।
भेषज देकर वृषभसेन मुनि तन सुचि कीनौं ॥
कौंडरेशने शास्त्र दान दीनौं चितलाई।
सूकरने दे अभैदान निज हित उपजाई।

---

१ उक्तं च–श्रीषेणवृषभसेनौ कौण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ता ॥
वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ १८ ॥

अब तिनही संक्षेपनें, कथा कहूं मैं गायके।
क्रम करके भवि सुन लीजिये, मनवच काय लगायके॥१८

अथ आहारदान कथा।

चौपाई।

पहिले ही श्रीषेण नरिन्द्र। भुक्तिदान दीनो गुणवृन्द। ताकर शांतिनने करतार। उपजे शांतिनाथ अवतार॥ १९॥ भो स्वामिन सोलम तीर्थेश! जैवन्ते वरतौ जगतेश॥ तुमरौ चरित जगत में सार। भुक्ति मुक्ति को है दातार॥ २०॥ सोई श्रेष्ठचरित्र पवित्र। हमको शांति अर्थ हो नित्त। कोड़ौं सुखदाता यह कथा। धरो सुमन हिरदे सर्वथा॥ २१॥ सब दीपनमधि जम्बूदीप मानो जनमें लसत महीप। ताके दक्षिण भाग मझार। भरत क्षेत्र है धनुपाकार॥ २२॥ श्रीजिन भाषित धर्म पवित्र। ताकर पूरित है वो क्षेत्र। तामधि मलय देश अभिराम। नगर रतन संच्यपुर नाम॥ २३॥ तासविषैं परजा-रिछपाल। सिरीसेन नामा नरपाल। धीर वीर दाता अधिकाय। सब अरि नासै बुद्धिपसाय॥ २४॥ दीरघदर्शी किरियावन्त। धर्मविषैं चित धरै अत्यन्त। पुन्य उदयतें भोगत भोग। निज गृहमें पँचेंद्रीजोग॥ २५

दोहा।

ता नृपके रानी भई, जुग तिय रूपनिधान।
सिंघनंदिता नाम इक, आनन्दिता सुजान॥ २६॥

तिन दोनोंके सुत भये, शशि रविकी उनहार।
इँद्र उपेन्द्र सु नाम है, सूरवीर अधिकार ॥ २७ ॥
इत्यादिक परिवार जुत, सिरीसेन महराज।
पुन्य उदय निज धाम मैं, तिष्ठत सब सुखसाज ॥ २८ ॥

रोला छन्द।

तिस ही नगरी विषैं सात्यकी विप्र बुद्धिधर।
जंघा नाम्ना नारि सत्यभामा पत्नीवर ॥
तैसेही इक अचल ग्राम मैं विप्र रहत है।
धरनी जट तिस नाम वेदवेदाङ्ग सहित है ॥ २९ ॥
ताके अग्रिला नारि पुत्र जुग सुन्दर प्यारे।
इन्द्रभूत औ अगनिभूत ये नाम सुधारे ॥
कपिल नाम इक दासीसुत, तिसके घरमाहीं।
पूरवउदैपसाय बुद्धि तीक्ष्ण अधिकाहीं ॥ ३० ॥

दोहा।

नित प्रति दुज निज सुतनको, जबै भनावे वेद।
सुनकर दासीतनुज यह, उर धारे विन खेद ॥ ३१ ॥
निज धीके परसादतैं, पढ़ौ वेद वेदांत।
पंडित है तिष्ठत भयौ, धारे रूप अनंत ॥ ३२ ॥

सोरठा।

करौं जतन जन कोय, बुद्धि कर्मअनुसारिणी।
तातैं पण्डित होय, विना सिखाये जगविषैं ॥ ३३ ॥

पद्धड़ी।

तब सब ही दुज मन क्रोध ठान। धरनीजटतैं इम वच

बखान। दासी सुत को विद्या समोह। दोनी अदभुत नहिं जोग तोह ॥ ३४ ॥ ऐसे तिनके वच सुन तुरंत। मनमाहीं भै धरके अत्यंत। ताकौं गृहतैं दीनौं निकास। तब कपिल चलो ह्वै कर उदास ॥ ३५ ॥ पहुंचियौ रतन पुर दृज सुभेष। तब सात्यकि प्रोहत याहि पेख। बहु पण्डित लख निजधाम लाय। सतभामा तनुजा दइ विवाह ॥ ३६ ॥ अब कपिल सत्यभामा लहाय। राजादिकतैं बहु मान पाय। बहु वेदतनों करतौ बखान। सुखसे तिष्ठत आनंद ठान ॥ ३७ ॥

दोहा।

इह विधितैं बहु दिन गये, नारी भई रितुवंत।
कुचारित्र करनेथकी, वांछा करी अत्यंत ॥ ३८ ॥
इह विधि सतभामा लखौ, मनमें कियो विचार।
यह पापी किसको तनुज, संशय इम चितधार ॥ ३९ ॥

सोरठा।

प्रीत रहित यह होय, तिष्ठी अपने धाम में।
होनहार सो होय, यह विचार करती थकी ॥ ४० ॥

चौपाई।

अब धरनीजट ब्राह्मण जोय। पापउदय दारिदजुत होय। कपिल विभव सुनकै अधिकार। आवत भयौ तासके द्वार। ॥ ४१ ॥ याकौं लखकर कपिल तुरंत। चितमाहीं बहु रोस गहंत। बाहर सेती धर अनुराग। खड़ो होय ताके पगलाग ॥ ४२ ॥ ऊंचे विष्टर पै बैठाय। सुश्रूषा कीनी

बहुभाय। फिर पूछी मम भ्रातरू मात। सुखसौं हैं तुम भाषौ तात॥ ४३॥ इम कह लेकर उष्ण सुवार। याकौ न्होंन करायौ सार। बहुरि करे जो चित अहलाद। ऐसो भुक्त दियो खीराद॥ ४४॥ बहुत दिये वस्त्रादि मनोग। कहत भयौ सुनिये सब लोग। यह दुज पण्डित मेरो तात। ऐसी कुत्सित भाषौ बात॥ ४५॥ तब वो दुज दारिद्रपसाय। याकौ सुत कहके बतलाय। तातैं दारिदको धिक्कार। काज अकाज गिनै न लगार॥ ४६॥ इह विधि वीतैं कई ऐक मास। तब यह सतभामा गुण रास। धरनीजट को वहु धन दीन। बुलवाके एकान्त प्रवीन॥ ४७॥ भक्तिसहित इम पूछी बात। सत्य कहौ तुम याके तात। याकी चेष्टा मलिन अपार। नहीं प्रतीत मम चित्तमंझार॥४८॥ ऐसे सुनकर दुज तिह घरी। घर जाने की इच्छा धरी। कपिल प्रती धरके बहुरोष। और द्रव्य को पायो कोष॥४९॥ तासैं सब विरतांत बखा न। झट निज ग्रहको कियो पयान। इम सुन सतभामा दुख लई। पृथ्वीपति के सरने गई॥ ५०॥

दोहा।

राजा ने पुत्री करी, राखी अपने धाम।
कपिल कुबुद्धी दुष्टमति, कपटमूल लख ताम॥ ५१॥
नरनायक चित रोष धारि, स्याम करौ तिस भाल।
खर चढ़ाय निज देशतैं काढ़ दियौ ततकाल॥ ५२॥

राजनको यह धर्म है; करे सृष्टिप्रतिपाल।
दुष्टनको निग्रह करैं, नातरु होय कुचाल ॥ ५३ ॥

कवित्त।

एक दिना नृपपुन्यजोगतैं, तपरूपी रतननकी खान।
जुग चारनमुनि आये नभतैं, मानौं आये जुगशशि भान ॥
वर आदित्यगती ऋषिनायक, दूजे नाम अरिंजय जान।
तिनको देख उठौ नरनायक, पड़गाहे मन भक्ति सुठान ॥५४
ससगुणनिजुत हर्षसहित दियौ, स्वच्छ दान तिनकौं जिहि
बार। पंचाश्चरज भये अम्बरतैं, देवन कीनी जैजैकार ॥
अहो बात यह सत्य जगतमें, दानतनी महिमा अतिकार।
तातैं क्यों क्या शुभ न लहत हैं, सबहि सुलभ हो तिस
आगार ॥

दोहा।

अब कितने इक दिनन तक, सीरीसेन नरराय।
पुन्यउदै सुख भोगतो, फिर त्यागी निजकाय ॥५६॥

अडिल्ल।

खंड धातुकी पूरब मेरु महान है। उत्तर कुरु जहँ भोग
भूमि सुखथान है। तहं उपज्यौ बड़भाग भोग भोगत
घने। तीन पल्यकी आयु कौन महिमा भने ॥ ५७ ॥ अहो
कौन यह अचरजकारी बात है। साधोंकी संगतितैं शिव
पुरपात है। तातैं संगत करौ भले जनकी सदा। दुष्टन
कौ परसँग न कीजैं भवि कदा ॥ ५८ ॥

छन्द (१४ मात्राका)

अब नृपकी दोनौं नारी । जो प्राणोंतें अति प्यारी । अरु सतभामा जो थाई । तीनोंने मीच लहाई ॥ ५९ ॥ करके अनुमोदन भारी । लही भोगभूमि सुखकारी । दश[1] विधि के तरु सुखदाई । तिनकौं भोगे अधिकाई ॥ ६० ॥

छन्द (१४ मात्रा) ।

सो वो थानक दुतिवंता । तहां रोग, शोक नहिं चिंता । दारिद्र कभी नहिं आवे । औ अल्पायू नहिं पावे ॥ ६१ ॥ सब आपस में हितकारी । नहिं अरिको जहँ परचारी । नहिं शीत उष्ण की वाधा । तहां युद्ध तनों न उपाधा ॥ ६२ ॥ नहिं सेवक स्वामी कोई । सब ही आरज तहँ लोई । जनमादि मरन परयंते । नाना विधि सुख भोगंते ॥ ६३ ॥

दोहा ।

दानतनें परभावतैं, उपजत हैं नर भाम ।
सरल चित्त कोमल अधिक, हैं तिनके परिनाम ॥ ६४ ॥
तहँतैं चय कर देवगति, पावत हैं बड़भाग ।
यातैं उत्तम पात्रकौं, दान करौ जुतराग ॥ ६५ ॥

चौपाई ।

सो अब सिरीसेन[2]चर एह । पांचों अच्छन के सुख

---

१ उक्तं च—मद्यतुर्यविभूषास्रग्ज्योतिर्दीपगृहाङ्गकाः । भोजनपात्रवस्त्राङ्गा दशधा कल्पपादपाः ॥ २ श्रीषेण का जीव ।

सेय। भोग सहित त्यागी निजकाय। फिर ऊंचे ऊंचे पद पाय ॥ ६६ ॥ इसही भरत क्षेत्र के बीच। हस्तनागपुर सहित मरीच। तामें विश्व सेन भूपार। ऐरादेवी सुन्दर नार ॥ ६७ ॥ तिनके पुत्र भये जगतेश। सोलम तीर्थंकर परमेश। चक्रवर्तिपद पाय अनँग। बहुरि मोक्ष सुख लहो अभँग ॥ ६८ ॥

काव्य (रोला) ।

देखो भवि जो भुक्ति देत हैं, श्रद्धामन करके।
ते दोउ लोक मंझार, शर्म पावत अघ हरके ॥
यातैं भविजन दान, देहु पात्रनिकेतांई।
अपनी शक्ति समान, जासु फल सुर शिवदाई ॥ ६९ ॥

गीता छन्द।

श्री कुंदकुन्द सुवंश में वर, मूलसंघविषैं जये।
निरमल रतनत्रयकर विभूषित, मल्लिभूषण गुरु भये ॥
तिन शिष्य जानौं ब्रह्म नेमीदत्त ने भाषी कथा।
अब तिनौंके अनुसार लेकर कथन कीनौं सर्वथा ॥७०॥

दोहा।

दान सुपात्रनकौं दियो, सिरीसेन नरराय।
ताकर तीर्थंकर भये, षोडस मैं सुखदाय ॥ ७१ ॥
सो स्वामी सन्ताप मम, दूर करो तत्काल।
शान्तिअर्थ पूजे प्रभू, यातैं नाऊं भाल ॥ ७२ ॥

इति आहार दान कथा

अथ औषधिदान कथा ।

मंगलाचरण ।

रोला ।

वरनूं श्रीजिनचन्द, और सरस्तुति जगमाता ।
गुरु निरग्रन्थ दयाल, नमूं जे हैं जगत्राता ॥
वरनूं औषधिदानतनी, शुभ कथा अबारी ।
तिस दीरघफल आयु, लहै जन जगत मँझारी ॥ १ ॥
बहुरि लहै चित स्वास्थ, कुष्ट आदिक सब नाशै ।
होय निरोग शरीर, सदा आनन्द प्रकाशै ।
पावै धन अरु धान्य, सम्पदा वपु निर्मल अति ।
बहुरि लहै शिवथान, देय जो भेषज नितप्रति ॥ २ ॥

दोहा ।

सो यह औषधदान शुचि, दीजे पात्रनहेत ।
दयासहित श्रम टारके, जो पावौ सुखखेत ॥ ३ ॥
जिन जिन जीवन फल लहौ, भेषजदान सुदेय ।
तिनकी महिमा प्रभु बिना, जगमें को वरनेय ॥ ४ ॥

पद्धड़ी ।

अब इस ही सनबन्ध के मंझार । श्री वृषसेनाको चरितसार । पूरव अनुसार कहूं बनाय । कल्याण हेत सुनो चित्त लाय ॥ ५ ॥ इस अन्तर येही भरत क्षेत्र । श्री जिनके जन्म थकी पवित्र । तहँ कमलजुक्त सुन्दर विशेष । जनपद नामा है एक देश ॥ ६ ॥ कानेरीपत्तन

तासु मद्ध । नृप उग्रसेन नामा प्रसिद्ध । सब विद्यामंडित अवनिपाल । परजाहितकारी सुगुनभाल ॥ ७ ॥ ताही नगरी में सेठ एक । तिस नाम धर्मपति जुतविवेक । जिनचन्द्चरनराजीव[1] जेह । षटपद[2] सम तिनपै रमै एह ॥ ८ ॥ तिनके बड़भागनि शीलवान । धनश्री सेठानी श्रीसमान । गुणरूप रतन की धरनहार । पतिकौं प्यारी आनन्दकार ॥ ९ ॥

दोहा ।

तिनके पूरब पुन्यतैं, सुता भई द्युतिवान ।
मानौं उज्वल गेहमैं, कीरति ही उपजान ॥ १० ॥

सोरठा ।

कांचन रूप अपार, नाम वृषभसेना धरौ ।
रतिरम्भादिक नार, तिस लखकैं लज्जा धरैं ॥ ११ ॥
रूपवती तिस नाम, पालै धात्री[3] प्रीततैं ।
नित मंजन अभिराम, याहि करावै जतनतैं ॥ १२ ॥

गीता छन्द ।

इस वृषभसेनाके न्हवनपय[4],तैं भरौ इक गरत ही ।
ता मध्य कूकर रोगपीड़ित, आन नित प्रति परत ही ॥
तातैं विमल तन भयो जाकौ, सर्व पीड़ा नस गई ।
इम देखके सब धाय विस्मय,-वंत चितमाहीं भई १३
मनमें विचारी यह कुमारी, पुन्यवंत महान है ।

१ जिनेन्द्र के चरण कमल । २ भौंरा । ३ धाय । ४ स्नान के पानी से ।

इस न्हौनको जल रोगनाशक, सुधाकी उनमान है ॥
तिस ही सलिलको बूंद ले, निज मात को यानैं दई ।
द्वादश बरसतैं अन्ध थी तिस आंजतैं चख खुल गई ॥

चौपाई ।

तबही रूपवती यह धाय । जननीके चख लख हरखाय ॥
तिस अस्थानतनौं शुभ तोय । भेपजसम ताको अविलोय
॥ १५ ॥ अवनी में कीनौं विख्यान । या प्रभावतैं सब
दुख जात ॥ नेत्र कुक्षि सिर रोग नसन्त । कुष्ट जहर
व्रण* सर्व हरन्त ॥ १६ ॥ या अन्तर इक दिन नरईश ।
नरपिंगल नामा मंत्रीश । ताकों घनपिंगलनृप देश । भेजौ
चमू[1] जु देय विशेष ॥१७॥ जब यह पहुंचौ जाय तुरंत ।
तानें जतन कियौ इह भंत ॥ हालाहल सब कूपं मंझार ।
डरवायौ तानैं रिस धार ॥ १८ ॥ तब याके सब जन
समुदाय । पीवत पय ज्वर अधिक लहाय । कष्टित ह्वै कर
मन परधान[2] । फिर कर आये अपने थान ॥ १९ ॥ रूपवती
धात्रीजल जोग । लावत ही सब भये निरोग ॥ जैसे
श्रीगुरु वचनप्रसाद । ततछिन नासै मिथ्यावाद ॥२०॥अब
यह उग्रसेन नरपाल । क्रोध अनिलकर तन परजाल ॥
घनपिंगल राजाकी ओर । चढ़ि चालौ बहु सेना जोर ॥२१॥
तिस कूपनको पीवत वार[3] । सबके ज्वर उपजी अविकार

*घाव । १ सेना । २ मंत्री । ३पानी ।

तब नरपति ह्वै चित्त उदास । फिर कर आयो निज आवास[२] ॥ २२ ॥

दोहा ।

नरपिंगल मंत्री कह्यौ, सेठ सुता विरतन्त ।
सुनकर चित हर्षित भयो, उग्रसेन बहुभन्त ॥ २३ ॥
निज पीड़ा के नाशकौं, जल मांगो ता पास ।
सेठानी भयकरि तबै, सेठ प्रते इम भास ॥ २४ ॥

रोला ।

हे स्वामी इस सुतातनौं मंजन कौ पानी ।
क्या नृपशीस मंभार, अघ डारन बुधि ठानी ॥
कहै सेठ नारि, नृपति पूछै जो अब ही ।
सांच सांच कह देहूं, झूठ बोलूं नहिं कब ही ॥ २५ ॥
अहो सन्त जन सत्य रूप जो बोलैं वायक[३] ।
तिनके कबहूं दोष, नहीं उपजै दुखदायक ॥
इस दम्पति[४] करि मन्त्र, सुता के न्हौनतनौं पै[५] ।
भेजो वासो हाथ, गई सो नृपति पास लै ॥ २६ ॥
तिसी सलिल को लेय नृपति, निज सीस लगाया ।
परसत ही तत्काल भई, तिस निरमल काया ॥
रूपवती नैं सब वृतान्त, पूछौ नरनायक ।
इसने कन्या चरित कह्यो, सब ही सुखदायक ॥ २७ ॥

२ घर । ३ वचन । ४ पुरुष और स्त्री । ५ पानी

ताही छिन नररत्न, सेठको तुरत बुलाओ ।
धनपति सुनत प्रमान, तबै राजा ढिग आयो ॥
कीनौं बहु सम्मान, कहौ पुत्री निज दीजै ।
कह्यो सेठ मैं देहुं, काम जो इतने कीजै ॥ २८ ॥

सोरठा ।

स्वर्ग मोक्ष सुखदाय, अष्टाह्निक पूजा भली ।
पँचामृत भरवाय, जिनमंजन नित प्रति करौ ॥ २९ ॥

दोहा ।

जो जन कारागार[1] में, पंछी पींजरमाहिं ।
इनकौं बेगि छुड़ाइये, हे पृथ्वीपति नाह[2] ॥ ३० ॥
तो अपनी तनुजा विमल, रूपभागद्युतिवान ।
तुमको देऊ वेग ही, कुलदीपिका महान ॥ ३१ ॥

चौपाई ।

नृप तब इम बच किये प्रमान । फिर विवाह का उत्सव ठान । परनी सेठ सुता अभिराम । नाम वृषभसेना गुणधाम ॥ ३२ ॥ दीनौं पटरानीपद सार । सुखसौं तिष्ठै निज आगार ॥ नृपने सब कारज दिये त्याग । याहीतैं क्रीडा अनुराग ॥३३॥ अब यह वृषसेना धर्मज्ञ । करै सदा जिनन्हौन सुयज्ञ ॥ अरु निरग्रंथ गुरुनको देत दान बहुत विधि भक्तिसमेत ॥ ३४ ॥ सदा शील पालै बड़भाग । धरमी जनतें धारत राग ॥ अहो धर्मवंतन

1 जेलखाना । 2 नाथ ।

की सेव । बहु फल दायक है स्वयमेव ॥ ३५ ॥ ऐसैं जगतपूज जिनधर्म । पालते तिष्ठै गुनशुभकर्म ॥ इस अन्तर काशी का राय । पृथ्वीचन्द महा दुठभाय ॥ ३६ ॥ थौ इनके बँदीगृह बीच । ताकौं नहिं छोडौं लख नीच ॥ अहो दुष्ट जे जीव अयान । कभी बन्धत नहीं छुटान ॥ ३७ ॥ नारायणदत्ता तिस नार । तानैं मन्त्र सुयेम विचार । छुडवावनकौं अपने कन्त । करत भई शाला इह भन्त ॥ ३८ ॥

दोहा ।

कुपसेनाके नामतैं, बाँटे बहु विधि दान ।
विप्र आदि बहुजननकौं, करके बहु सन्मान ॥ ३९ ॥
दान लेयकर बहुत जन, इस पत्तन में आत ।
निज सुखनैं धात्री सुनी, दाननकी सब बात ॥ ४० ॥

चौपाई ।

रूपवती सुनत बहु भन्त । चित में करके रोष अनन्त ॥ कन्यासौं इम भाषी जाय । तें मम पूछे बिन किह भाय ॥ ४१ ॥ दानन की शाला अधिकाय । कीनी नानाविध हरषाय ॥ रहै कुसमसेना सुन मात । मैं नाहीं कीनी यह बात ॥ ४२ ॥ मेरा नाम लेय जन कोय । भाटन है तिन हर्षित होय ॥ ताकी खबर मगावौ वेग । ज्यों नाशै मन को उद्वेग ॥ ४३ ॥ रूपवती धात्री ने गये । कुलकारन मोनि पूछी सबै । उन भाष्यौं सब

दानवृतान्त । इन कन्या प्रति चयौ तुरन्त ॥४२॥ तबै वृषभसेना सुन येह । पहुँची नृपपै हर्षितदेह । शीघ्र छुडाऔ पृथ्वीचन्द । तब तिन पायौ बहु आनन्द ॥४५॥

दोहा ।

अब इस पृथ्वीचन्द ने, याकौ पट लिखवाय
तिस चरनन में सिर धरत, अपनो भाव दिखाय ।४६॥

पद्धड़ी ।

पीछे वो पट लेकर रिसाल । इनकौ दिखलायौ नायभाल ॥ वृषसेना तैं इम वच उचार । हे देवी तुम मम मान सार ॥ ४७ ॥ तुमरे प्रसाद मम जन्म येह । अब सुफल भयो है विन संदेह ॥ इम सुन नृपतिय संतोष पाय । राजातैं बहु सनमानग्याय ॥ ४८ ॥ याकौं आज्ञा दिलवाय दीन । घनपिंगल पै जावौ प्रवीन । यह सुनके पृथ्वीचंद राय । पहुंचो निज नगरी माँहिं जाय ॥ ४९ ॥ अब सुनी मेघ पिंगल नरेश । आवे काशीपति मम सुदेश ॥ वह जानत है मम सर्व भेद । ऐसै निश्चय करि धारि खेद ॥ ५० ॥ नृप उग्रसेन के पास आय । हूवो चाकर निज सीस नाय जे हैं जन जग मैं पुन्यवान । तिन अरी होत मित्रन समान ॥ ५१ ॥

दोहा ।

इस अन्तर इक दिनविषैं, उग्रसेन नर राय ।
यह विधि परतिज्ञा करी, बहुविधि मन हर्षाय ॥ ५२ ॥

अडिल्ल ।

जो आवे मम भेट तासुमवतैं कही । आवी घनपिंगल कौं देऊंगौ सही । अर्ध भेट पटरानी यामैंतैं लहे । इह विधितै नृप वचन आप मुखतैं कहे ॥ ५३ ॥

एकदिना मणि कम्बल जुग आवत भये । एक एक नव दोनों कौं नृपने दये । अहो वचन जे जग में पँडित कहत हैं । ते धन मणि कँचन मैं चित नहिं धरत हैं ॥ ५४ ॥

जोगीरासा ।

एक दिना घनपिंगल की तिय, रूपवती पै आई ।
मणि कँवल ओढ़े सिर ऊपर, तहां प्रमाद वसाई ॥
पटरानी को चो मणिकंवल, वदल गयौ तिह थारी ।
देखो कर्मतनी गति अद्भुत, टरत नहीं है टारी ॥ ५५ ॥
अब यह घनपिंगल एकै दिन, नृप की सभा मझारी ।
आयोचो मणिकंवल ओढ़ैं, राय लखो ततकारी ॥
क्रोध अनिलकर तप्त भयो तन, पटधृतजोग लहाई ।
ऐसे लख कर यह घनपिंगल, भाग गयो भयखाई ॥ ५६ ॥

चौपई ।

अब यह उग्रसेन नरपाल । क्रोधयुक्त कीनैं चखलाल ॥ भ्रत सुबि बुधि तिस गई पलाय । सती वृषभसेना कुल चाय ॥ ५७ ॥ तव ही डारो वारिधि बीच । हेयाहेय न जानी नीच ॥ अहो मूढ़ जनको धिक्कार । क्रोधप्रभाव तजैं सुविचार ॥ ५८ ॥ जब यह सती उदधि में परी ।

ऐसी विधि परतिज्ञा करी ॥ इस उपसर्ग थकी मैं बचूं । तो वृतिका पद निश्चय रचूं ॥ ५९ ॥ ताही छिन इस शील प्रभाय । जलदेवी तहं पहुंची आय ॥ भक्तिसहित विष्टरपैथाप[1] । चवंर ढोरि जै जै आलाप ॥ ६० ॥ अहो भव्य अचरज क्या एह । शील महां सुर शिवपद देह ॥ अगनि होत है सलिलसरूप । उदधि महां थल होय अनूप ॥ ६१ ॥ शत्रु होय निज मित्र महान । हालाहल है सुधासमान ॥ सुयश सदा फैले चहुँ ओर । पुन्य सम्पदा व्यापै जोर ॥ ६२ ॥ तातैं पाप हतन यह शील । पालो बुधजन करौ न ढील ॥ श्रीजिनेन्द्रने इम उच्चरौ । यमरूपी मरकट वश करौ ॥ ६३ ॥

दोहा ।

नारि वृषभसेनातनौं, ऐसे सुन विरतत ।
ताके ढिग जातौ भयौ, पश्चातलाप करंत ॥ ६४ ॥

सवैया इकतीसा (मनहर)।

तब ही वो सती सार मनमें वैराग धार, गई ततकार वनमाहिं मुनि पासजी । गुणधर नाम तासु अवधि धरैं प्रकाश, तिन पद नमि इम करी अरदास जी ॥ अहो जगवँद दयावारिध सुगुणबृन्द, किये कौन काज मैंने सुखदुखरासजी । पूरव बृत्तांत सब कहौ कृपाधारी अब, मूरतीक गेय जेते रहै तुम्हैं भास जी ॥ ६५ ॥

---

१ सिंहासनपर ।

दोहा।

तब मुनिनायक इम कही, सुन पुत्री चितलाय।
पहिले भव इस देशमें, तू द्विजकन्या थाय॥ ६६॥

चाल मेघकुमारकी देसी।

नागश्री तुझ नाम थौ री, नृपके देय बुहारी। देत सोहनी तू सदा री, ये ही था अधिकार, री पुत्री तू मिथ्या मति लीन॥६७॥ एक दिना मंदिरविषें जी, आये श्रीरिषिचन्द मुनिदत्त नामा जगपती जी, तपमंडित गुणवृन्द॥ सयानी सुनिये चित्त लगाय॥ ६८॥ मंदिरके पड़कोटमें जी, वायु रहित लखि गर्त। तामैं संध्याके समय जी, आतमध्यान सुकर्त। सयानी तिष्ठे मौन सुधार॥ ६९॥ हे पुत्री तैं रौसतैं री, धरि अज्ञानकुभाय। कहत भई यहांतें नगन तू, अबही वेग पलाय॥ रे जोगी आवेगौ नरनाथ॥ ७०॥ मैं पृथ्वी निरमल करू' रे, इहविधि वचन कठोर। तैं भाषे तौ भी तजी ना, श्रीगुरुने वह ठौर॥ सयानी तिष्ठे मेरु समान॥ ७१॥ फिर तैं चित न विवेकतें री, क्रोध करौ अनिकार। सब ही रेत बुहारिके री, मुनिके सिरपै डार॥ दियौ तैं, तब तिन समता कीन॥ ७२॥

दोहा।

अहो जगतकर पूज जे, श्रीमुनि दीनदयाल।
तिनपै कूड़ो डारनो, जोग नहीं थौ बाल॥ ७३॥

सोरठा।

जगमैं दुखदातार, मूढ़नकी कुलसित क्रिया।
ताकौ है धिक्कार, आचारज ऐसे कहैं॥ ७४॥

चौपाई।

इस अन्तर नृप होत प्रभात। देवथान आयौ हरसात। गर्तमाहिं मुनिस्वासप्रभाय। तृणकौ पुंज हलत लखि राय॥ ७५॥ तहां आय देखे ऋषिचन्द। शीघ्र निकासे जुतआनंद॥ तब मुनिवर समताके गेह। तैं लखके मन धरौ सनेह॥ ७६॥ निन्दा अपनी ते सत्कार। कीनी तित ही वारम्बार॥ धर्मविषैं वहुविधि रुचि धरी। मुनिकी निरमल कायाकरी॥ ७७॥ पीड़ा शान्ति अर्थ बड़भाग। औषधदान दिया जुतराग॥ फिर कीनों वैयाबृत सार। सब कलेशकौ मैटनहार॥ ७८॥ हे पुत्री तहंतैं तजप्रान। तू उपजी तिस पुन्यप्रमान। धनपति सेठ धनश्री गेह। नाम वृषभसेना वृषनेह॥७९॥ हे वाले! तैं औषधदान। दियो विशेष चित्त हरषान॥ ताकर सर्व औषधी रिद्ध। तैं पाई यह जग परसिद्ध॥८०॥ हे मुग्धे! मुनि सिर कत-वार। तैं डारौ जो वहु रिस धार॥ तिस अघतैं नृपकर चित बंक। अम्बुधि डारी देय कलंक॥ ८१॥

दोहा।

तातैं नित प्रति कीजिये, साधु सेव मनलाय।
पीड़ा कबहुं न दीजिये, जो सुख चाह अथाय॥ ८२॥

पद्धड़ी।

यह जग आतापहरंन सुवैन। सुनके इन पायौ परम चैन॥ वैरागमाहिं चित धारि स्वच्छ। धरममता त्यागिनृपादि पच्छ॥८३॥ गणधर मुनिके चरननमंस्कार। वहु विधितैं

करके नमस्कार ॥ ।संसारदुष्टनाशक प्रचँड । जिनदीक्षा तब लीनी अखँड ॥ ८४ ॥ हो भव्य महाऔषध सुदान । यानैं दीनौं बहु भक्ति ठान ॥ तैसे तुम भी पात्रन महान । भेषज दीजे नित चित समान ॥ ८५ ॥ यह गणधर मुनि भाषौं चरित्र । सो जगप्रसिद्ध अति ही पवित्र ॥ ताको सुनिकर भविजीव जेह । जिनभाषित तपतैं करो नेह ॥८६

दोहा ।

सती वृषभसेना महा, भई जगतपरसिद्ध ।
सो हमको मंगल करौ, दीजे बहु सुख रिद्ध ॥ ८७ ॥
औषधिदानतनी कथा, पूरन कीनी येह ।
भव्य जीव वांचो सुनौ, धरके बहुविधि नेह ॥ ८८ ॥

इति औषधिदान कथा ।

अथ ज्ञानदान कथा ।

मंगलाचरण ।

गीता छन्द ।

इस जगत वारिधितैं उतारनहार श्रीजिनदेव जी
तिनके चरनअम्बुज नमत हूँ, ठानके बहु सेव जी ॥
अरु मात सरस्वतिको जजूँ जिनवदनतैं उत्पन्न भई ।
अज्ञानपटलविनाशनी अंजनशलाका सम कही ॥ १ ॥
हैं मोहविजयी जे नगनगुरु, रत्नत्रय भूषित सदा ।
जिन चरन औके गेह मम, तिनकों नमत हूं हूं मुदा ॥

अब कथा शास्त्रसुदानकेरी, सुनौ भवि चित लायके।
सब जगतको आनन्ददायक, देत बोध बढ़ायकै ॥ २ ॥

दोहा।

सब जीवनके नेत्र सम, ज्ञानदान सुखकार।
पात्रनको नित दीजिये, या सम और न सार ॥ ३ ॥

चौपाई।

इसही ज्ञानतनैं परभाव। प्रानी निर्मलकीर्ति लहाव। भुक्ति मुक्ति पावै सो जीव। नाना विधि सुख लहै अतीव ॥४॥ सोई सम्यकज्ञान महान। श्रीजिनेन्द्रकरि भाषित जान॥ रहित विरोध धरै जे चित्त। ते पावें कल्याण सु नित्त ॥ ५ ॥ ताको आराधौ इह भंत। दान मानकरि पूजि अत्यँत॥ कर प्रभावना बहु विध सार। पाठन पठनथकी अतिकार ॥ ६ ॥ ज्ञान प्रभावना है स्वाध्याय। पंच प्रकार जान चित लाय। वांचन पूछन अरु अनुप्रेश। आमनाय धर्मोपदेश ॥ ७ ॥ बहुत कहनतैं कारज कौन। ज्ञानदान है सुखत्रय भौन॥ ताते भविजन केवलहेत। शास्त्रदान द्यो हिये सुचेत ॥ ८ ॥ इस ही दानतनैं परसाद। भये बहुत जन अव्याबाध॥ तिनके नाम कथनके जोय। इस जगमैं समरथ नहिं कोय ॥ ९ ॥ अब इस ही प्रस्ताव मझार। कहूं कथा जिनश्रुत अनुसार॥ नृप कौंडेश दयौ यह दान। ताकर भये प्रसिद्ध महान ॥ १० ॥

अडिल्ल।

अब इस अंतर भरतक्षेत्र सुखदायजी। जैनधर्मकरि

अति पवित्रता पाय जी । तामैं कुरुमरिग्राम अधिक सुन्दर लसै । गोविंद नामा ग्वालतासके मध वसे ॥ ११ ॥
एक दिना यह ग्वाल गयौ वनमैं सही । तरुके कोटरमाहिंथकी पुस्तक लही । भक्तिसहित श्रीपद्मनन्दि मुनिको दई । कैसे हैं मुनिचंद सार सुखकी मही ॥ १२ ॥

दोहो ।

पहिले इस ही ग्रंथको, बड़े बड़े ऋषिराय
पढ़ि पढि परभावन विविध, करवाई अधिकाय ॥ १३ ॥
फिर पूजा करवाय के, तिस ही थान संस्कार ।
थापन करके जगतगुरु, करत भये सुविहार ॥ १४ ॥

काव्य ।

तैसे ही पद्मनंदि मुनिवर विधि ठानी ।
पुस्तक कोटरमध्य थाप कियौ गमन सु ज्ञानी ॥
कैसे हैं मुनिराय पापमयपंक[1]पखालन ।
ज्ञानध्यानकर युक्त, सकल अच्छनमद[2] गालन ॥ १५ ॥
अब यह गोविंद गोप, बालपनतैं चित देकर ।
नित्यौं ग्रंथकी करा करै, पूजन बहु हितकर ॥
कितने दिनमैं काल व्यालने गरस्यो याकौं ।
प्रानहरन यमराज कहौ भच्यौं नहिं काकौं ॥ १६ ॥

---

१ कीचड़ । २ इन्द्रियोंका मद ।

करके मरो निदान पुन्यतें उपजौ जाई।
ग्रामकूटके पुत्र महा सुन्दर सुखदाई ॥ १७ ॥
एक दिना फिर पद्मनंदि मुनिके पद भैंटे।
जातिसुमरनज्ञान पाय अघसंचित मैंटे ॥
मुनिके चरनसरोज नमूं, यह धर्मराग पग ।
कीनैं निरमल भाव, लई दीक्षा तिनके ढिग ॥ १८ ॥
दोहा—अब यह मुनि तन त्यागके, भयौ राय कौंडेश ।
अपने बलतैं अरजिये[1], रवितैं तेज विशेष ॥ १९ ॥

चौपाई।

दुति करके कंदर्प समान । काँति लई शशिकी उनमान
विभौयुक्त सुखतनौ निवास । कीरति चहुं दिस रही
प्रकाश ॥ २० ॥ नाना विध के भोग करंत । परजा सुत-
वत पालै संत । जिनभाषित वृष चार प्रकार । करतौ
तिष्ठै निज आगार ॥ २१ ॥ ऐसे सुखसों काल वितीत ।
होत भयो इनको इह रीत । फिर कोई कारन नृप देख ।
भवतैं विरकत होय विशेख ॥२२॥ मनमैं इह विधि कियौ
विचार । परतछ यह सँसार असार। भोग रोगसादृश दुख-
दाय । सम्पति चपलावत नस जाय ॥ २३ ॥ तन मलीन
मलमूत्रजुगेह । अशुच अपावन नासै येह ॥ इह विधि वह
बुधवंत नरेश । मनमें किया विचार विशेष ॥२४॥ मनवच-
काय राजकौं त्याग । फिर जिन अर्चा करि बड़भाग ॥ गुरुके

१ सचय करना ।

पदपंकज सिरनाय । दोष रहित तप ग्रहन कराय ॥२५॥

दोहा ।

पूरब पुन्य प्रभावतैं, श्रुतकेवलि पद पाय ।
यामैं अचरज कौन है, ज्ञानदान शिवदाय ॥ २६ ॥
जैसे यह रिषि ज्ञाननिधि, भये दानपरभाय ।
तैसें तुम भी हित करो, दान देहु अधिकाय ॥ २७ ॥

छप्पय ।

जे भविजन प्रभुज्ञान,-मनी सेवा मन आनैं ।
कर कलशाअभिषेक, बहुरि पूजा विधि ठानैं ॥
स्तवन जपन विधि करैं, पठन पाठन अधिकाई ।
लिखन लिखावन शास्त्र, दान सनमान कराई ॥
अरु करैं प्रभावन अँग जे, भक्तिसहित भवि है मुदा ।
हैं ये ही अंग सम्यक्तके, कोटौं सुखदाता सदा ॥ २८ ॥

सवैया तेइसा (मत्तगयन्द) ।

ज्ञान पसाय लहै धन धान्य, सुसुन्दर मँगल अन्तिम पावे। ऊंच कुली धरि गोत्र पवित्र जु, निर्मल ज्ञानकला घर आवै ॥ दीरघ आयु लहै सुखदायक, सर्वमनोरथसिद्धि लहावै । और कहै अब कौन भला, इम दानतैं मोक्ष अँकुर उगावै ॥ २९ ॥

दोहा ।

तातैं दोषरहित प्रभू, तिन जो कियौ बखान ।
तिसको सम्भावन करौ, ज्यौं पावौ कल्यान ॥ ३० ॥
ज्ञानदानकी कथा शुभ, मैंने भाखी एहु ।

सो मुझकौं अरु भविनकौं, केवललक्ष्मी देहु ॥ ३१ ॥

कवित्त।

शोभित श्री वर मूलसंघ जो, तामैं गच्छ भारती जान।
श्री भट्टारक हैं मल्लिभूषण, रतनत्रय करि दिपत महान ॥
तिनके शिष्य ब्रह्म नेमीदत, श्रीजिनके अनुसार बखान।
दानकथा यह भव्य जननकौं, शान्तिअर्थ हूजौ अधिकान ॥

इति ज्ञानदानकथा।

अथ अभयदान कथा।

मंगलाचरण।

दोहा।

शोभामंडित जिन विमल, तिन पद नमि सुखकार।
अभयदान की कहत हूं, कथा सूत्रअनुसार ॥ १ ॥

कड़खा छन्द।

बहुरि श्रीशारदामायको ध्यायके, जासको भव्यजन जजत सारे। होहु कल्याणके अर्थ मोकौं अभै, जास परसादतैं सब निहारे ॥ शास्त्रवारिधि महा तासके पारको, करन नवका भली तू उदारे। जिनमुखोत्पन्न तैं भई परगट सही, अबै आ कंठ तिष्टौ हमारे ॥ २ ॥

गीता छन्द।

जे ब्रह्मकर शोभित सिरीगुरु, मूलउत्तरगुण धरैं। तिनकौं जजूँ हित धारके, जे शान्ति बहु विधिकी करैं ॥ तिनकी भगति निश्चयथकी, सुख श्रेष्ठमारग हेतु है। भवदधि

विषमतैं पार करने,—को यही वर सेतु* है ॥३॥

दोहा।

ऐसे मैं गुण आसके, सुमरन करि अधिकाय ।
अभयदान दृष्टान्तकी, कथा कहूं हितकाय ॥ ४ ॥

चौपाई।

ये ही भरतक्षेत्र दुतिवंत । धर्मकर्मकर परम दिपंत ॥ तामधि सोहत मालवदेश । बहु शोभा कर लसत विशेष ॥ ५ ॥ धनकनकर मँडित है जेह । सम्पतिकौ जानौ शुभ गेह ॥ जग जनको लक्ष्मी दातार । वन उपवनकर शोभितसार ॥ ६ ॥ सरिता वहै महारसभरी । भूभृत[१] सोहैं मानौं करी[२] ॥ कमलनिकर शुभ भरे तड़ाग । तिनकी षटपद[३] लहत पराग ॥ ७ ॥ देवनकौ प्यारौ अधिकाय । तहां रमत हैं नित प्रति आय ॥ नरनारी तहँ अति दुति वंत । पुन्य उदयतैं सुख विलसंत ॥ ८ ॥ तिस ही देश विषैं अभिराम । ठांव ठांव शोभें जिनधाम ॥ ग्राम २ परवतके भाल । ऊँचे शिखर जु दिपैं विशाल ॥ ९ ॥ तिनपै कलश महा दुतिवान । चामीके[४] चमके अधिकान । तापर धुजा महा लहकंत । मानौं बुलवावत विहसंत ॥ १० ॥ भव्य जननकौं दर्शनहेतु । शुभ पथ दिखलावें वे केतु[५] ॥ जिन आगार लखत तत्कार । प्रानी पाप करें परिहार

* पुल १ पर्वत । २ हाथी सरीखे । ३ भौंरा । ४ सोने के । ५ धुजाएं

॥ ११ ॥ अहा कौन वरनै अधिकार । जामैं मुनि नित करत विहार ॥ रत्नत्रयभूषित तपगेह । शिवपुरमैं धारतहैं नेह ॥ १२ ॥ तिसही देशविषैं जिनधर्म । सुखदाता वरतत है पर्म ॥ कैसौ वृष सम्यकलगयुक्त । पूजादानवरत-संयुक्त ॥ १३ ॥ तिस ही देशविषैं जिनचन्द । तिष्ठत हैं आनँद के कंद ॥ दोष अष्टदशरहित दयाल । गनधर-नायक जग रिछपाल ॥ १४ ॥ अरु तहँके जन सम्यकवंत । सो दरशन जानौ इह भंत ॥ देवधर्म गुरुकी परतीत । सबतत्वनकी जानत रीत॥१५॥जिनवर जज्ञ[1] करैं चितलाय स्वर्गमोक्ष सुखके जो दाय ॥ भक्तिसहित पात्रनकों दान । देवैं नित प्रति वित्तसमान ॥ १६ ॥ शील वरत धारैं उपवास । इत्यादिक वृष जो गुणरास ॥ ताको पालें पंडित संत । सोई सम्यकवंत महँत ॥ १७ ॥ ऐसी शोभाजुत वह देश । ता महिमा कह सकै न शेश ॥ तासधि सोहै सम्पतिधाम । सुन्दर भटनामा एक ग्राम ॥ १८ ॥

दोहा—कुम्भकार देवल रहै, तासधि बहु धनवान

अरु धर्मिल नायक महा, कुत्सित तिस ही ठान ॥ १६ ॥

इन दोनों ने सीर में, बनवायो इक गेह ।

पथिक जननकौं तासमैं, उतरोवें कछु लेह ॥ २० ॥

पद्धड़ी ।

इकदिन यह देवलजुत कुलाल । उस थानक में श्री

1 पूजा ।

मुनि दयाल ॥ वृषहेत उतारो हरषवंत । फिर चलौ गयौ तिन ही तुरन्त ॥ २१ ॥ तब धर्मिल चित में धर कुभाय इक परिव्राजक को वेगि लाय ॥ श्री मुनिकौं तो दीनों निकार । ताकौं उतरायौ तिसमँझार ॥ २२ ॥ है सत्य बात यह जगत बीच । जे पापी दुष्ट अयान नीच ॥ तिनकौं प्यारे लागें न संत । जिमि रवि लखि घूघू रोषवंत ॥ २३ ॥ अब इस थानक को तजि मुनीश । इक तरु लखि तिष्ठे जगतईश । ननतैं निस्पेही सुगुणमाल । रवि शशि खग इन्द्र नमन्त भाल ॥ २४ ॥ बहु शीत उष्ण आदिक प्रचंड । सब सहैं परीषह ध्यान मंड ॥ अब देवल तरुतल मुनि निहार । अरु इन तनौं कारन विचार ॥२५॥ तिस नायक पै हू क्रोधवंत । तासेती युद्ध कियो अत्यंत इन रुद्र भावतैं मीच लीन । विंध्याचलपै उपजे मलीन॥२६॥

दोहा—कुम्भकार सूकर भयो, काया पाई पुष्ट ।
नायक व्याघ्र तहां हुवौ, जन्तु हनै यह दुष्ट ॥ २७ ॥

चौपाई ।

तिस पर्वत की गुफामँझार । जुग चारन मुनि करन विहार ॥ नाम समाधिगुप्त त्रयगुप्त । तिष्ठे ध्यान धारि जिनउक्त ॥ २८ ॥ कैसे हैं रिषिचन्द दयाल । धीर वीर सब जग रिछपाल ॥ पृथ्वीतल को करन पवित्त । क्षमा-धंत अति ही शुभचित्त ॥ २९ ॥ अब वो सूकर तिन ही

आय । देखत जाती-सुमरन[1] पाय ॥ श्री जिनवरको व्रत सुनि सार । किंचित व्रत किये अँगीकार ॥ ३० ॥ अरु वो व्याघ्र दुष्ट विकराल । मानुषगंध सूंघि तिस काल ॥ मुनि सन्मुख निज आनन फाड़ि । आयौ तत छिन दुष्ट दहाड़ि ॥ ३१ ॥ जब वो सूकर होय सचेत । मुनि रक्षा करने के हेत ॥ गुफातनैं गोपुर के द्वार, तासौं युद्ध कियो विकरार ॥ ३२ ॥ रदन दशन अरु नखतैं सही । भयो युद्ध जो जाय न कही ॥ फिर दोनों तजकै निज प्रान । गति पाई निज भावसमान ॥ ३३ ॥ सूकर तो निज पुन्य वसाय । प्रथम स्वर्ग में सुरपद पाय ॥ अणिमादी रिधि लही अत्यन्त । तम नाशक तन अतिदुतिवन्त ॥ ३४ ॥ भागवन्त आवत ज्ञुतदेव । लखके जन हरषें स्वयमेव सुंदर पट भूषण धारंत । कंठ विषैं धर दाम दिपंत ॥ ३५ ॥ कल्पवृक्षकी दुति परिहरे । अवधिज्ञान चख निरमल धरे दिव्य सौख्य देवांगन संग । नितप्रति भोगै भोग अभंग ॥ ३६ ॥ बहुत अमर सिर आज्ञा धरैं । तिस महिमा किम वरनन करें ॥ जिनवर चरन कमल को दास । पूजन करै धार उल्लास ॥ ३७ ॥ कृत्रिम अकृत्रिम श्रीजिनधाम अरु श्रीजिनप्रतिमा अभिराम ॥ अथवा तीर्थंकर साक्षात । तिनकौं बंदे पुलकित गात ॥ ३८ ॥ दुर्गतिनाशक सिद्धक्षेत । यात्रा ठानै हर्ष समेत ॥ महामुनीको भक्ति करंत ।

[1] जातिस्मरण ज्ञान ।

संतनतैं वातसल धारंत ॥ ३६ ॥

दोहा—ऐसे सुख भोगन सदा, अभयदान पर भाव ।
तिस महिमा जगके विषें, को कवि कहै बनाय ॥ ४०

रोला—ऐसे श्रीजिनकथित, धर्म ताके प्रसाद कर ।
भव्यजीव सब थान विषैं, सुख लहैं अतुलवर ॥ ४१ ॥
सो किहिविधि है धर्म, जिनेश्वर अरचा करनी ।
पात्रनको अन्न-दान सुव्रत, किरिया अघहरनी ॥
तिथि औसर उपवास यही वृष हिरदे धारौ ।
सो कल्याणनिमित्त सिरीजिनने उच्चारौ ॥ ४२ ॥

दोहा—अब वह पापी व्याघ जो, कुत्सित दुष्ट अज्ञान ।
मुनिभक्षण में भाव कर, छोड़ दिये निज प्रान ॥ ४३ ॥
तिसी पाप परभावतें, गयौ नरक के बीच ।
ताड़न मारन आदि बहु, सहित भयो वह नीच ॥ ४४ ॥

सोरठा—तातैं भविजन जान, पुण्य पापको फल अफल ।
श्रीजिनवृष उर आन, सदाकाल ताकौं भजौ ॥ ४५ ॥

रोला ।

श्रीमत यह शुभकथा, जगतमें हो प्रसिद्ध अति ।
श्रीजिनसूत्रमझार कही, गणनायकजी सत ॥
अभयदानसंयुक्त, पात्रभेदनकरि जानौ ।
परम सौख्यसुथान, पाप नाशक पहिचानौ ॥ ४६ ॥

इति अभयदान कथा